म. प्र. उच्च न्यायालय, जबलपुर

विविध याचिका क्रमांक 4808 / 1993

याचिकाकर्ता ..... डी. के. तिवारी, आयु लगभग 56 वर्ष.
पिता – आर. पी. तिवारी,
व्यवसाय – विकास अधिकारी
भारतीय जीवन बीमा निगम,
मुंगेली. संभाग: रायपुर,
जिला: बिलासपुर (म.प्र.)

विरूद्ध

उत्तरवादी .....1. भारतीय जीवन बीमा निगम,
द्वारा, अध्यक्ष.भारतीय जीवन बीमा निगम,
केंद्रीय कार्यालय. बंबई – 21

2.आंचलिक प्रबन्धक,
भारतीय जीवन बीमा निगम,
आँचलिक कार्यालय, कानपूर (यूं. पी)

3.मंडल प्रबंधक,
भारतीय जीवन बीमा निगम,
मंडल कार्यालय, रायपुर,
जिला: रायपुर (म.प्र.)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अंतर्गत उत्प्रेरण–लेख, परमादेश, निषेध आदि के मामले में यथोचित दिशा–निर्देश के लिए रिट

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

उच्च न्यायालय बिलासपुर (छ.ग.)

विविध याचिका क्रमांक 4808/1993

डी. के. तिवारी

विरुद्ध

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं अन्य

आदेश

16.2.2005 के लिये सूचीबद्ध करें।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

हस्ता./–
सुनील कुमार सिन्हा
न्यायाधीश ,

उच्च न्यायालय बिलासपुर (छ.ग.)
विविध याचिका क्रमांक 4808/1993

डी. के. तिवारी

विरुद्ध

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं अन्य

उपस्थिति:

श्री सुधीर वर्मा, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता।
श्री मुकेश शर्मा; श्री अविनाश कुमार उत्तरवादीगण के अधिवक्ता।

आदेश

(16.2.2005)

सुनील कुमार सिन्हा, न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(01) याचिकाकर्ता ने यह रिट याचिका उत्तरवादी संख्या 3, अनुशासनात्मक प्राधिकारी (मंडल प्रबंधक) द्वारा पारित दिनांक 21.7.1978 (अनुलग्नक–डी) के आदेश तथा भारतीय जीवन बीमा निगम (कर्मचारी) विनियम, 1960 के प्रावधानों के अंतर्गत अपीलीय प्राधिकारी उत्तरवादी संख्या 2 (आंचलिक प्रबंधक द्वारा पारित दिनांक 25.1.1979 (अनुलग्नक–जी1) के आदेश को रद्द करने के लिए दायर की है।

(02) मामले के तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता को भारतीय जीवन बीमा निगम (इसके पश्चात इसे "निगम" कह कर संदर्भित किया जायेग) में, संभवत वर्ष 1964 में विकास अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था। उक्त पद के लिए उन्होंने 31.3.1964 को आवेदन पत्र भरा था, जिसमें उन्होंने अपनी शैक्षणिक योग्यता "मैट्रिक उत्तीर्ण और इंटरमीडिएट परीक्षा में सम्मिलित (परिणाम अभी तक घोषित नहीं)" बताई थी। उन्होंने अपनी जन्मतिथि 06.05.1938 दर्शाई है।

(03) 12 जुलाई 1977 को; याचिकाकर्ता को अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा आरोप पत्र दिया गया, जिसमें यह निर्दिष्ट किया गया था कि निगम में याचिकाकर्ता को मैट्रिकुलेशन का मूल प्रमाण पत्र निगम को जमा करना आवशयक है, जिसे वे 28.3.1970 तक जमा नहीं कर सके थे तथा इस कारण से कि उसी तिथि उनको एक ज्ञापन जारी किया गया था। उसके बाद भी उनको कई अन्य स्मरण–पत्र जारी किए गए तथा याचिकाकर्ता के अनुरोध पर उनको 31.7.1976 तक का समय दिया गया, लेकिन याचिकाकर्ता प्रमाण पत्र जमा करने में विफल रहा। 18.1.1977 को उनको उपरोक्त पत्र प्राप्त होने के 10 दिन के भीतर मैट्रिकुलेशन प्रमाण पत्र जमा करने का पुनः निर्देश दिया गया, लेकिन वे इसे जमा करने में, फिर से विफल रहे। तथापि,

याचिकाकर्ता द्वारा 30.04.1977 तक का समय देने के लिए पत्र भेजा गया था जिसे 17.04 1977 को एक आधिकारिक पत्र द्वारा प्रदान किया गया था , फिर भी आदेश का अनुपालन नहीं किया गया और उक्त तरीके से, याचिकाकर्ता सक्षम प्राधिकारी द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य के दौरान दिए गए आदेशों और निर्देशों का पालन करने में विफल रहा। आरोप पत्र में आगे निर्दिष्ट किया गया है कि उपरोक्त कृत्यों से, याचिकाकर्ता उन्हें दिए गए आधिकारिक निर्देश का पालन करने में विफल रहे है और उन्होंने अच्छे आचरण के प्रति पूर्वाग्रह एवं निगम के हित के लिए विरुद्ध; हानिकारक कार्य किया है एवं पूर्ण सत्यनिष्ठा बनाए रखने में विफल रहे है, जिससे 1960 के उक्त विनियमन के प्रावधानो 21, 24 और 39 (1) का उल्लंघन हुआ है और वह उक्त विनियमन के विनियमन 39 (1) (ए) से (ओ) के तहत निर्दिष्ट एक या अधिक दंड के लिए उत्तरदायी है। आरोप पत्र की एक प्रति अनुलग्नक आर–1 के रूप में अभिलेख पर ली गई है।

(04) याचिकाकर्ता ने, उपरोक्त आरोप–पत्र का अपना जवाब दिनांक 25.7.1977 के द्वारा दिया । उसने अपने ऊपर लगे आरोपों का खंडन किया। याचिकाकर्ता ने अपना पक्ष प्रस्तुत करते हुये कहा कि वह. वर्ष 1963 के म.प्र. माध्यमिक शिक्षा मंडल की इंटरमीडिएट परीक्षा में शामिल हुआ था और उन्होंने उक्त परीक्षा के फॉर्म के साथ अपना मूल मैट्रिकुलेशन प्रमाण पत्र संलग्न किया था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि उन्होंने उसने, इंटरमीडिएट परीक्षा की मूल अंक सूची और कक्षा–8 का बोर्ड प्रमाण पत्र भी, आयु प्रमाण के संबंध में निगम कार्यालय में प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने यह भी कथन प्रस्तुत किया कि निगम द्वारा उनके प्रथम पॉलिसी क्रमांक एस/8946676 में लिखित दिनांक 06.5.1938 को उसके जन्म दिनांक के रूप में स्वीकार की गई है, जो सहकारी बैंक, बिलासपुर के अभिलेखों के आधार पर है, जहां वे उस समय सेवारत थे। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि उन्होंने मूल हाई स्कूल (मैट्रिकुलेशन) प्रमाण पत्र वापस करने के लिये माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में कई आवेदन किए थे, जिनका उत्तर नहीं दिया गया और इस कारण से वे निगम के समक्ष अपना प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं कर सके और उन्होंने हमेशा आवश्यक प्रयास करने के लिए समयावधि की प्रार्थना करते रहे । इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, याचिकाकर्ता ने उसे जारी आरोप पत्र दिनांक 12.7.1977 के को वापस लेने की प्रार्थना की । उत्तर दिनांक 25.07.1977 की एक प्रति अनुलग्नक आर–2 के रूप में अभिलेख पर ली गई है।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(05) आदेश अनुलग्नक–डी से ऐसा प्रतीत होता है कि श्री एस.के. वासुदेव, एडीएम (एनबी) मंडल कार्यालय, रायपुर को जांच अधिकारी नियुक्त किया गया था, जिन्होंने जांच करने के बाद दिनांक 14.4.1978 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसके अनुसार आरोप सिध्द पाये गये । यह पाया गया कि मैट्रिकुलेशन प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने के मामले में विभिन्न समय मे. याचिकाकर्ता को जारी किए गए निर्देशों का पालन करने में, वे विफल रहे । साथ ही, यह भी पाया गया कि याचिकाकर्ता का व्यवहार इस अर्थ में उल्लंघनकारी माना जा सकता है, की उसने नियोक्ता के साथ पूर्ण पूर्ण निष्ठा का पालन नहीं किया। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जांच अधिकारी के निष्कर्षों से सहमति जताई और याचिकाकर्ता को दिनांक 22.05.1978 को एक कारण बताओ नोटिस जारी किया, जिसमें विनियमन 39(1)(एफ) के तहत निगम की सेवा से हटाने का दंड

प्रस्तावित किया गया था। याचिकाकर्ता ने अपना उत्तर दिनांक 10.07.1978 को प्रस्तुत किया। यद्यपि, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने आरोपी के उत्तर को, प्रस्तावित शास्ति के खिलाफ असंतोषजनक और असहमतिकारक मानते हुए 21.07.1978 (अनुलग्नक–डी) का आदेश पारित किया, लेकिन सेवा से हटाने का शास्ति लगाने प्रस्ताव के बावजूद, उन्होंने विनियमन 39 (1) (डी) के अंतर्गत समयमान में मूल वेतन को दो चरणों तक स्थायी रूप से कम करने की शास्ति लगायी।

(06) अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित उपरोक्त आदेश के विरुद्ध, याचिकाकर्ता ने अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दायर की। अपील के ज्ञापन की एक प्रति अनुलग्नक–एफ केरूप में दायर की गई है। अपीलीय प्राधिकारी ने, याचिकाकर्ता की अपील संलग्न आदेश जी के रूप में है को 25.01.1979 को खारिज कर दिया और अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित शास्ति आदेश की पुष्टि की। इसके बाद, याचिकाकर्ता ने उपरोक्त आदेश की विधिकता , वैधता और औचित्या को चुनौती देते हुए यह याचिका दायर की है और वेतन के बकाया (अंतर) आदि के रूप में सभी पारिणामिक लाभों के साथ इसे रद्द करने की प्रार्थना की है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(07) याचिका के साथ, याचिकाकर्ता ने मैट्रिकुलेशन परीक्षा प्रमाणपत्र 1962 की एक फोटोकॉपी दायर की है, जिससे पता चलता है कि याचिकाकर्ता ने ए.आई.वी.एस. परीक्षा, अलीगढ से उक्त परीक्षा द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण की है, यह दस्तावेज अनुलग्नक ए है। दस्तावेज सी जबलपुर विश्वविद्यालय के वार्षिक प्रतिवेदन का सार है, जिसमें एयू इंडिया विद्वत सम्मेलन (एआईवीएस), अलीगढ़ उल्लेख है, जिसे इस विश्वविद्यालय द्वारा याचिका के प्रावधानों के अनुसार मान्यता दी गई है।

(8) याचिकाकर्ता का मूल तर्क यह है कि उसका प्रमाण पत्र इंटरमीडिएट परीक्षा में बैठने के लिए माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के पास जमा था, इसलिए वह अपनी नियुक्ति के समय या बाद के किसी भी में स्तर में प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं कर सका। हालांकि, उन्होंने बोर्ड से किये गये पत्राचार की प्रतियाँ प्रस्तुत किया था और यह भी दर्शाया था कि उन्होंने मूल प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए बोर्ड के कार्यालय के साथ प्रयास किए थे, लेकिन इसे प्राप्त नहीं किया जा सका और केवल इसी कारण से, निगम से निर्धारित तिथि तक वांछित मूल प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं कर सके, जिसे निगम के हित के लिए हानिकारक और अच्छे आचरण के लिए अनुचित या कोई कार्य नहीं कहा जा सकता है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विनियमन 21, 24 और 39 के अंतर्गत उल्लिखित विनियमों के प्रावधानों का कोई उल्लंघन नहीं है, इसलिए शास्ति का आदेश विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है। याचिकाकर्ता ने आगे कहा है, कि वास्तव में दिनांक 09.12.1992 को उसे ए.बी.एम. (सेल्स) के संवर्ग में पदोन्नति के लिए साक्षात्कार में उपस्थित होने का प्रस्ताव दिया गया था और वह उक्त साक्षात्कार में उपस्थित हुआ। याचिकाकर्ता द्वारा इंटरमीडिएट (कला) परीक्षा 1963 से संबंधित माध्यमिक शिक्षा मंडल, म.प्र., भोपाल की, अंक सूची की एक प्रति भी बाद में दाखिल की है।

(09) उत्तरवादीगण ने भी अपना जवाब दाखिल किया है और याचिकाकर्ता के तर्क को नकार दिया है। उत्तरवादीगण द्वारा यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों के लिए विभागीय जांच के बाद याचिकाकर्ता को उसी के लिए दोषी ठहराया गया है और उसे उचित शास्ति दी गई । जांच अधिकारी, अनुशासनात्मक प्राधिकारी और अपीलकर्ता ने विधि के अनुसार काम किया है और शास्ति का आदेश और अपीलीय आदेश इस न्यायालय द्वारा रिट अधिकारिता में हस्तक्षेप का अधिकार नहीं देते हैं।

(10) याचिकाकर्ता के विद्वान् अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि वास्तव में याचिकाकर्ता पर लगाए गए आरोप सिद्ध नहीं हुए हैं और जांच अधिकारी तथा अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध उपरोक्त आरोप को सिद्ध और स्थापित मानकर विधि की भूल की है। वास्तव में याचिकाकर्ता को उक्त विनियम 1960 के विनियम 21, 24 या 39(1) के अंतर्गत शास्ति के योग्य नहीं ठहराया जा सकता है।'

(11) मैंने मामले के अभिलेखों का अवलोकन किया है तथा जांच रिपोर्ट का भी अवलोकन किया है। सबसे पहले, यह विचार किया जाना चाहिए कि ऐसे मामलों में हस्तक्षेप का दायरा क्या है। **(यूनियन ऑफ़ इंडिया: अपीलार्थी विरुद्ध परमा नंदा उत्तरवादी) एआईआर 1989 एस.सी. 1185 में** प्रतिवेदित निर्णय में, जिसमें प्रकरण न्यायाधिकरण के माध्यम से आया था, सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि अनुशासनात्मक मामलों या शास्ति मामलों के कार्यवाही में हस्तक्षेप करने के लिए न्यायाधिकरण की अधिकारिता को अपीलीय अधिकारिता के समकक्ष नहीं माना जा सकता । न्यायाधिकरण, जांच अधिकारी या सक्षम प्राधिकारी के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता जहाँ वे मनमाने या पूरी तरह से विकृत न हों।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(12) सर्वोच्च न्यायालय ने भी **भगत राम, अपीलार्थी–विरुद्ध–हिमाचल प्रदेश एवं अन्य, उत्तरवादी एआईआर 1983 एस सी पृष्ट 454 में** प्रतिवेदित प्रकरण में यह माना गया है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत याचिका में, उच्च न्यायालय, अनुशासनात्मक प्राधिकारी के निर्णयों पर अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता है, लेकिन जहां निष्कर्ष पूरी तरह से विपरीत है, न्यायालय हमेशा उस निर्णय में हस्तक्षेप कर सकता है। उपरोक्त निर्णय के पैरा 10 में उद्धृत निर्णय का भी संदर्भ लिया जा सकता है यानी **एआईआर 1964 एससी 364 (यूनियन ऑफ़ इंडिया –विरुद्ध – एच. सी. गोयल, उत्तरवादी);** जिसका सुसंगत भाग निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है जैसा कि ... ... भगत राम के मामले के पैरा10 में पुन: प्रस्तुत किया गया है :

> **"यह अभी भी विचारणीय है कि क्या उत्तरवादी सही नहीं है जब वह यह मानता है कि इस मामले के तथ्यों में सरकार का निश्चय किसी भी साक्ष्य पर आधारित नहीं है। यह एक ऐसी धारणा है जो विकृत है और इसलिए अभिलेख पर ऐसी स्पष्ट त्रुटि है कि उच्च न्यायालय इसे रद्द करने में न्यायोचित हो सकता है। बर्खास्त किए गए या अन्यथा धारा 311(2) को आकर्षित करने के लिए दायर की गई रिट याचिकाओं के संबंध में, उच्च**

न्यायालय को धारा 226 के तहत यह जांच करने का अधिकार है कि क्या सरकार की स्थिति जिसका आक्षेपित बर्खास्तगी का आदेश है किसी साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है। यह सच है कि बर्खास्तगी का आदेश, जो किसी शासकीय कर्मचारी को कदाचार का दोषी पाए जाने पर पारित किया जा सकता है, या प्रशासनिक आदेश के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है; फिर भी, ऐसे शासकीय कर्मचारी के खिलाफ वैधानिक नियमों के तहत की गई कार्यवाही यह निर्धारित करने के लिए कि क्या वह उसके खिलाफ लगाए गए आरोप का दोषी है, अर्ध–न्यायिक कार्यवाही की प्रकृति में है और इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि उदाहरण के लिए, एक शासकीय कर्मचारी द्वारा एक आदेश की रिट दायर की जा सकती है यदि वह उच्च न्यायालय को यह संतुष्ट करने में सक्षम है कि उक्त कार्यवाही में सरकार का अंतिम निष्कर्ष, जो उसकी बर्खास्तगी का आधार है, किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है।

(13) **तमिलनाडु राज्य – बनाम – थिरु के वी पेरुमल और अन्य (1996) 5 एससीसी 474** में प्रकाशित मामले से निपटाते समय, जहां मामला प्रशासनिक न्यायाधिकरण के माध्यम से आया था, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि आरोपों की सच्चाई या अन्यथा के बारे में स जानना न्यायाधिकरण का अधिकार नहीं है क्योंकि न्यायाधिकरण विभागीय अधिकारियों पर अपीलीय प्राधिकारी नहीं है। यह भी माना गया है कि न्यायाधिकरण को इस बात पर चर्चा करने में अपनी अधिकारिता का अतिक्रमण नहीं करना चाहिए कि क्या आरोप उपलब्ध सामग्री के आधार पर स्थापित किए गए हैं।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(14) उपर्युक्त संदर्भों के आधार पर, यह सामान्यतः माना जाता है कि यह न्यायालय जांच अधिकारी या अनुशासनात्मक प्राधिकारी या अपील प्राधिकारी के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं कर सकता, जब तक कि निर्णय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर आधारित न हो या वह पूर्णतः विकृत हो या प्राकृतिक न्याय के मौलिक सिद्धांतों के उल्लंघन में लिया गया हो।

15) इन सिद्धांतों को इस प्रकरण में लागू करें और यदि जांच रिपोर्ट का अध्ययन किया जाए, तो यह पता चलता है कि जांच अधिकारी ने उत्तर प्राप्त करने के बाद याचिकाकर्ता को सुनवाई का पर्याप्त अवसर दिया और प्रस्तुतकर्ता अधिकारी और याचिकाकर्ता के बयानों को रिकॉर्ड करने के बाद और यह घोषणा लेने के बाद कि उसके किसी साक्षी की जांच करने की आवश्यकता नहीं है, कार्यवाही समाप्त की और उसके समक्ष प्रस्तुत सामग्री का उचित विश्लेषण करने के बाद ऊपर उल्लिखित निष्कर्ष पर पहुंचे। इस मामले में, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के साथ–साथ विनियामक 39(2) के प्रावधानों का पूरी तरह से अनुपालन किया गया है।

(16) विनियम 21 और 24 के प्रावधानों का भी संदर्भ दिया जा सकता है। विनियम 21 में कहा गया है कि कर्मचारी को कर्तव्य के प्रति पूर्ण निष्ठा और समर्पण का पालन करना होगा और इन विनियमों का पालन करना होगा तथा उन सभी आदेशों और निर्देशों का पालन करना होगा

जो उसे समय–समय पर किसी ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा उसके पदीय कर्तव्यों के दौरान दिए जाएं जिनके अधिकार क्षेत्र, पर्यवेक्षण या नियंत्रण में कर्मचारी को कुछ समय के लिए रखा गया हो। विनियम 24 में यह प्रावधान है कि प्रत्येक कर्मचारी निगम की ईमानदारी और निष्ठा से सेवा करेगा तथा निगम के हितों को ध्यान में रखते हुए हर संभव प्रयास करेगा तथा अपने कार्यों में शिष्टाचार और ध्यान दिखाएगा। विनियम 39(1) में शास्ति लगाने के प्रावधान हैं तथा यह कहा गया है कि कॉलम (ए) से (जी) में निर्दिष्ट शास्ति उस कर्मचारी पर लगाया जा सकता है जो विनियमों का उल्लंघन करता है या जो लापरवाही, अक्षमता या आलस्य प्रदर्शित करता है या निगम के हितों के विरुद्ध अनुचित कार्य करता है या निर्देशों का उल्लंघन करता है या जो अनुशासन का उल्लंघन करता है या अच्छे आचरण के प्रतिकूल किसी कार्य का दोषी है।

(17) इन तीन प्रावधानों के मात्र अवलोकन से यह स्पष्ट है कि निर्दिष्ट शास्ति (कोई एक या अधिक) निगम के विनियमों के उल्लंघन के लिए भी उचित और पर्याप्त कारणों से अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा लगाया जा सकता है। यदि जांच की निष्पक्षता में परिवर्तन नहीं किया जाता है और कोई भी पक्षपात स्थापित नहीं होता है और जांच का आधार अभिलेख पर उपलब्ध ऐसे साक्ष्य हैं जो यह दर्शाते हैं कि वास्तव में याचिकाकर्ता ने अपने उच्च प्राधिकारियों द्वारा जारी आदेशों या निर्देशों का पालन नहीं किया है, तो पूरी तरह से यह कहा जा सकता है कि याचिकाकर्ता विनियमन 21 के उल्लंघन के लिए शास्ति का उत्तरदायी था। मैंने जाँच अधिकारी के निष्कर्ष का परीक्षण किया है। निष्कर्ष पूर्ण विश्लेषण के बाद निकाला गया है। अभिलेख में दर्ज है कि याचिकाकर्ता को निगम द्वारा मैट्रिकुलेशन सर्टिफिकेट जमा करने के लिए बहुत शुरुआत से ही कहा गया था और इसके संबंध में उसे कई आदेश/निर्देश जारी किए गए थे। याचिकाकर्ता ने निगम द्वारा जारी आदेशों का पालन नहीं किया और उसने उसे जारी किए गए निर्देशों का भी पालन नहीं किया। वास्तव में, याचिकाकर्ता ने कई बार निर्देशों की अनदेखी की और बहुत लंबे समय के बाद वह प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने के लिए कुछ और समय देने की प्रार्थना लेकर आया। यहां तक कि जब उन्होंने समय पर प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया तो उनके द्वारा की प्रार्थना की गई कि और अंततः वे अंत तक प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने में असफल रहे। केवल उक्त स्थिति में, जांच अधिकारी ने यह निष्कर्ष दर्ज किया है कि याचिकाकर्ता का आचरण सद्भावी नहीं था और उसने अपने उच्च अधिकारियों के आदेश की अवज्ञा की है क्योंकि, यदि मूल प्रमाण–पत्र बोर्ड से प्राप्त नहीं जा सकती थी , तो वह आसानी से एक द्वितीय–प्रति प्राप्त कर सकती थी और अधिकारियों को इसे प्रस्तुत कर सकता था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(18) इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि वर्तमान मामला ऐसा नहीं है जहां निष्कर्ष पूरी तरह से भिन्न है या वह अभिलेख पर किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है या वह मनमाने ढंग से निकाला गया है या प्राकृतिक न्याय के मौलिक सिद्धांतों का उल्लंघन करते हुए दर्ज किया गया है।

(19) इस न्यायालय की राय में विनियम 21 का पूर्ण उल्लंघन किया गया है और जिसके लिये याचिकाकर्ता को सभी रूप से विधि के अनुसार दण्डित किया गया है। दंडादेश और अपील आदेश

में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अन्तर्गत किसी निष्कर्ष की आवश्यकता नहीं है। याचिका में कोई गुणानुगुन नहीं है और इसे खारिज किया जाता है। हालाँकि, वाद व्यय के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

सही /-
सुनील कुमार सिन्हा
न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

Translated By: Adv. Ankita Shrivastava